शांति प्रवाह

अनुक्रम

१. आदिशक्ति देवी माँ ५

२. एकादशी माहात्म्य १९

३. अथ श्रीराम रक्षा स्तोत्रम् ३३

आरतियाँ

१. आरती श्रीगणेशजी ४०

२. आरती श्रीदुर्गाजी ४१

३. आरती श्रीशंकरजी ४३

४. आरती श्रीजगदीशजी ४४

५. आरती श्रीरामचंद्रजी ४५

६. आरती श्रीकुंजबिहारीजी ४६

७. आरती श्रीलक्ष्मीजी ४७

८. आरती श्रीकृष्णजी की ४८

देवी माँ का परिचय

हिंदू धर्मावलंबियों में माँ भगवती दुर्गा की पूजा-आराधना का विशेष महत्त्व है। माँ दुर्गा के अनंत रूप हैं। श्रद्धालु इनके सभी रूपों की स्तुति कर इनकी कृपा के पात्र बनते हैं। वर्ष में दो बार माँ दुर्गा के नौ रूपों की विशेष पूजा-अर्चना की जाती है। नौ दिन चलनेवाले इस धार्मिक अनुष्ठान को नवदुर्गा-पूजन और नवरात्र-पूजन आदि कहा जाता है। देश भर में नवदुर्गा-पूजन उल्लास और भक्ति-भाव से मनाया जाता है।

इन नौ दिनों में माँ दुर्गा के विभिन्न नौ शक्तिरूपों की अर्चना की जाती है। ये नौ विभिन्न रूप माँ दुर्गा के साक्षात् शक्ति अवतार हैं, जो भक्तों की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण कर उन्हें लोक-परलोक में मान-सम्मान दिलवाते हैं। माता दुर्गा के नौ शक्ति रूप इस प्रकार हैं—

शैलपुत्री

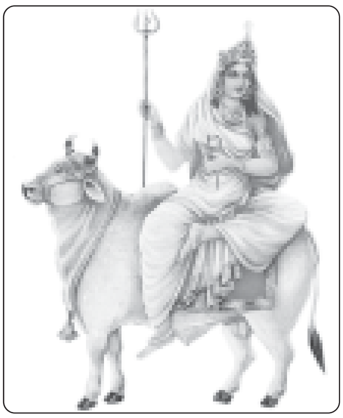

नवदुर्गाओं में माता शैलपुत्री प्रथम दुर्गा मानी जाती हैं। माता दुर्गा के इस रूप में उनके हाथों में त्रिशूल और कमल-पुष्प सुशोभित है। माता शैलपुत्री का वाहन वृषभ है। धार्मिक ग्रंथों में इनकी उत्पत्ति की निम्न कथा वर्णित है—

माता शैलपुत्री अपने पूर्वजन्म में दक्ष प्रजापति की कन्या के रूप में

उत्पन्न हुईं। तब इनका नाम 'सती' रखा गया। देवी सती बचपन से ही अनन्य शिव-भक्त थीं। युवा अवस्था में उन्होंने अपनी शिव-भक्ति व तपस्या के बल से शिवजी को प्रसन्न किया और उन्हें पति-रूप में पाने की कामना की। शिवजी ने मनोवांछित वर देते हुए उन्हें पत्नी रूप में स्वीकार किया।

एक बार दक्ष प्रजापति ने एक महायज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ में उसने ब्रह्मा, विष्णु और इंद्र सहित सभी देवताओं एवं ऋषि-मुनियों को आमंत्रित किया, किंतु भगवान् शिव को आमंत्रित नहीं किया। देवी सती ने जब यह सुना तो वे अपने पति का यह अपमान सहन न कर सकीं और उनका मन वहाँ जाने के लिए अत्यंत व्याकुल हो उठा।

वे क्रोधित होते हुए भगवान् शिव से बोलीं, ''हे नाथ! मेरे पिता दक्ष प्रजापति एक महायज्ञ का आयोजन कर रहे हैं। सभी देवताओं और ऋषि-मुनियों को वहाँ आमंत्रित किया गया है, किंतु उन्होंने आपको इस यज्ञ में आमंत्रित न करके आपका अपमान किया है। इसे मेरा मन कदापि स्वीकार नहीं कर सकता। अत: हे नाथ! आप मुझे वहाँ जाने की आज्ञा दें।''

देवी सती के क्रोध को देखकर शिवजी बोले, ''हे देवी! आपको इस प्रकार क्रोधित नहीं होना चाहिए। दक्ष प्रजापति महायज्ञ के कर्ता हैं। यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है कि वे किसे आमंत्रित करें और किसे नहीं। हमें इन व्यर्थ की बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। इस प्रकार की बातें मन की कटुता को बढ़ाती हैं।''

भगवान् शिव के इस प्रकार समझाने पर भी देवी सती का क्रोध कम न हुआ। उनका प्रबल आग्रह देखकर भगवान् शिव ने उन्हें वहाँ जाने की अनुमति दे दी।

जब देवी सती यज्ञस्थली पर पहुँचीं तो वहाँ उन्हें चारों ओर शिव-निंदा सुनाई पड़ी। दक्ष प्रजापति भी अपने सेवकों से घिरे हुए शिव-निंदा में लीन थे। देवी सती की सभी बहनें उनका उपहास और

व्यंग्य कर रही थीं। इस स्थिति को देखकर उनका क्रोध बढ़ गया। वे अपने पति का अपमान सहन न कर सकीं और वहीं यज्ञ की अग्नि में उन्होंने स्वयं को भस्म कर लिया। जब भगवान् शिव को इस बात का ज्ञान हुआ तो उन्होंने अपने गणों को भेजकर उस यज्ञ का विध्वंस करा दिया।

देवी सती ने अगले जन्म में शैलराज हिमालय के घर जन्म लिया। वहाँ उनका नाम 'पार्वती' रखा गया; किंतु शैलराज हिमालय के घर उत्पन्न होने के कारण ही उन्हें 'शैलपुत्री' भी कहा गया। इस जन्म में भी माता शैलपुत्री ने अपनी तपस्या के बल से भगवान् शिवजी को प्रसन्न करके उन्हें पति-रूप में प्राप्त किया। नव दुर्गाओं में माता शैलपुत्री का महत्त्व और शक्तियाँ अनंत हैं। नवरात्रों में प्रथम दिवस पर माता शैलपुत्री की ही पूजा-अर्चना की जाती है।

ब्रह्मचारिणी

नवदुर्गा का दूसरा स्वरूप माता ब्रह्मचारिणी के रूप में विख्यात है। श्वेत वस्त्र धारण करनेवाली माता ब्रह्मचारिणी के एक हाथ में जपमाला और दूसरे हाथ में कमंडलु सुशोभित होता है। पुराणों और धार्मिक ग्रंथों में इनकी उत्पत्ति की कथा इस प्रकार है—

दक्ष प्रजापति की यज्ञ वेदी पर प्राण त्यागने के बाद देवी सती ने पर्वतराज हिमालय की पत्नी मैना के गर्भ से पुनः जन्म लिया। कन्या के शुभ लक्षणों को देखते हुए उसका नाम 'पार्वती' रखा गया। जब पार्वती ने युवा अवस्था में प्रवेश किया तो एक दिन देवर्षि नारद घूमते-घूमते पर्वतराज हिमालय के यहाँ आ पहुँचे।

पर्वतराज हिमालय ने देवर्षि नारद का अतिथि-सत्कार किया और पार्वती का हाथ देखकर उसका भविष्य बताने का आग्रह किया।

देवी पार्वती को देखते ही देवर्षि नारद ने आसन से उठकर उन्हें प्रणाम किया। नारद के इस आचरण को देखकर पर्वतराज हिमालय और मैना आश्चर्यचकित रह गए।

उन्होंने नारदजी से इस आचरण का कारण जानना चाहा। तब वे हँसते हुए बोले, ''हे पर्वतराज! आपकी यह कन्या पूर्व जन्म में दक्ष प्रजापति की पुत्री और भगवान् शिव की पत्नी माता सती थीं। अपने पिता दक्ष प्रजापति द्वारा पति का अपमान किए जाने पर उन्होंने यज्ञ वेदी पर ही प्राणों का त्याग कर दिया था। अब उन्होंने देवी पार्वती के रूप में पुन: आपके घर में पुनर्जन्म लिया है। इसलिए मैंने इन्हें प्रणाम किया। अपने सुकर्मों के कारण यह इस जन्म में भी भगवान् शिव की पत्नी बनने का गौरव प्राप्त करेंगी।''

देवर्षि नारद की बात सुनकर देवी पार्वती ने उनसे भगवान् शिव की प्राप्ति का उपाय पूछा। नारदजी ने उन्हें कठोर तप द्वारा शिवजी को प्राप्त करने का उपदेश दिया।

नारदजी के उपदेशानुसार देवी पार्वती ने भगवान् शिवजी को पति रूप में प्राप्त करने के लिए सभी राजसी सुखों का त्याग कर कठोर तपस्या आरंभ कर दी।

देवी पार्वती ने तपस्या के आरंभिक 1,000 वर्ष कंद-मूल खाकर व्यतीत किए। तत्पश्चात् 3,000 वर्षों तक केवल जमीन पर टूटकर गिरे हुए बेलपत्रों को खाकर वे तपस्या में लीन रहीं। इसके बाद अनेक वर्षों तक उन्होंने निर्जल और निराहार तपस्या करते हुए वर्षा, आँधी व धूप में भयानक कष्ट सहे।

देवी पार्वती ने भगवान् शिव की हजारों वर्षों तक कठोर तपस्या की। इस तपस्या के फलस्वरूप उनकी काया एकदम क्षीण हो गई। उनकी कठिन तपस्या से तीनों लोकों में हाहाकार मच गया। इंद्र सहित

सभी देवगण और ऋषि-मुनि देवी पार्वती की कठोर तपस्या से भयभीत हो गए। वे सभी ब्रह्माजी के समक्ष उपस्थित हुए और उनसे देवी पार्वती को मनचाहा वर प्रदान करने की प्रार्थना की।

अंत में परमपिता ब्रह्माजी ने देवी पार्वती को दर्शन दिए और बोले, ''हे देवी! तुम्हारी कठिन तपस्या के समक्ष सभी देवगण नतमस्तक हैं। इस प्रकार का कठोर तप केवल तुम्हारे द्वारा ही संभव था। तुम्हारी मनोकामना शीघ्र पूरी होगी। भगवान् शिव तुम्हें पति-रूप में अवश्य प्राप्त होंगे। कठोर तपस्या के कारण सृष्टि में तुम्हें ब्रह्मचारिणी अर्थात् तप का आचरण करनेवाली कहा जाएगा।''

इसके बाद ब्रह्माजी ने देवी पार्वती का सौंदर्य उन्हें पुनः प्रदान कर दिया।

इस प्रकार देवी पार्वती को अपने तप के बल से भगवान् शिव पति रूप में प्राप्त हुए और वे संसार में ब्रह्मचारिणी नाम से विख्यात हुईं।

माता ब्रह्मचारिणी की उपासना से भक्तों में तप, त्याग, वैराग्य, सदाचार, संयम आदि की वृद्धि होती है और उन्हें सर्वत्र सिद्धि एवं विजय की प्राप्ति होती है। नवरात्रों के दूसरे दिन माता ब्रह्मचारिणी की पूजा-अर्चना की जाती है।

चंद्रघंटा

नवरात्रों के तीसरे दिन माता दुर्गा के शरीर से प्रकट हुई तीसरी शक्ति चंद्रघंटा की स्तुति की जाती है। इनके मस्तक में घंटे के आकार का आधा चंद्रमा शोभायमान है। यही कारण है कि भक्तजन इन्हें 'चंद्रघंटा देवी' कहते हैं।

माता चंद्रघंटा की कृपा से भक्तों के सभी पाप, बाधाएँ, शारीरिक कष्ट, मानसिक चिंताएँ और भूत-प्रेत बाधाएँ दूर होती हैं। सिंह पर सवार ये माता भक्तों में निर्भयता के साथ-साथ सौम्यता के गुणों का समावेश करती हैं। जो भक्त शुद्ध मन, कर्म और वचन से माँ चंद्रघंटा की पूजा-अर्चना करते हैं, उनके शरीर दिव्य प्रकाश से आभायुक्त हो जाते हैं। उनके शरीर से प्रकाशयुक्त अदृश्य शक्ति का विकिरण होता रहता है, जिससे उनके संपर्क में आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित होता है और उसका काम सरलता से बनता चला जाता है। माँ चंद्रघंटा दुष्टों का संहार करने के लिए सदैव तत्पर रहती हैं, किंतु इनके दर्शक और आराधक को ये माता अपने सौम्य और शांति से परिपूर्ण रूप के दर्शन करवाती हैं।

माता चंद्रघंटा का शरीर स्वर्ण वर्ण का है। इनके दस हाथ बताए गए हैं, जिनमें खड्ग, अस्त्र-शस्त्र, बाण आदि विभूषित हैं। देवासुर संग्राम में उनके घंटे की भयानक ध्वनि मात्र से सैकड़ों अत्याचारी दानव, दैत्य और राक्षस मृत्यु को प्राप्त हो गए थे।

इनकी मुद्रा सदैव युद्ध के लिए तैयार रहनेवाली होती है, जिसका तात्पर्य यह है कि अपने भक्तों के शत्रुओं के विनाश के लिए तैयार रहकर ये सदा उनका भला करने को आतुर रहती हैं। जिस भक्त पर माता चंद्रघंटा की कृपा होती है, उसे दैवी वस्तुओं के दर्शन होते हैं। दिव्य सुगंधियों और विविध प्रकार की ध्वनियाँ सुनाई देने लगें तो भक्त को यह समझ लेना चाहिए कि उस पर देवी की कृपा-दृष्टि बनी हुई है।

माता चंद्रघंटा की स्तुति विधि-विधान के अनुसार पूर्णतः पवित्रता के साथ करनी चाहिए। माता की कृपा प्राप्त कर हम समस्त सांसारिक कष्टों से मुक्त होकर परम पद के अधिकारी बन जाते हैं। साधना के दौरान भक्तों को सदैव माता के सौम्य रूप को अपने मस्तिष्क में केंद्रित रखना चाहिए।

कूष्मांडा

माता दुर्गा के चौथे स्वरूप को कूष्मांडा के नाम से जाना जाता है। नवरात्रों के चौथे दिन माता कूष्मांडा की पूजा-अर्चना की जाती है। माता कूष्मांडा का निवास-स्थान सूर्यलोक में है। इसी कारण उनके शरीर की कांति और आभा सूर्य के समान प्रकाशमान है। सृष्टि के संपूर्ण प्राणियों में इसी देवी का प्रकाश प्रदीप्त है। माता कूष्मांडा के दिव्य तेज से दसों दिशाएँ प्रकाशित हो रही हैं।

जब ब्रह्मांड का अस्तित्व नहीं था, चारों ओर अंधकार-ही-अंधकार था, तब माता कूष्मांडा ने अपनी मंद मुसकान द्वारा अंड अर्थात् ब्रह्मांड की उत्पत्ति की। इस प्रकार अपनी हलकी सी हँसी द्वारा ब्रह्मांड की रचना करने के कारण इन्हें माता 'कूष्मांडा' कहा गया।

ब्रह्मांड की उत्पत्ति के समय सूर्य एवं अन्य नक्षत्रों को माता कूष्मांडा ने अपने तेज से ही प्रकाश प्रदान किया था। तब से ब्रह्मांड की सभी वस्तुओं और प्राणियों में अवस्थित तेज माता कूष्मांडा की छाया है।

सिंह पर सवार माता कूष्मांडा को आठ भुजाओं के कारण अष्ट भुजाधारी देवी भी कहा जाता है। इनके हाथों में क्रमशः कमंडलु, धनुष-बाण, कमल-पुष्प, अमृत-कलश, चक्र, गदा और सभी प्रकार की सिद्धियों व निधियों को प्रदान करनेवाली जप की माला सुशोभित होती है।

माता कूष्मांडा भक्तों को हर प्रकार की सिद्धियाँ, धन, ऐश्वर्य और मोक्ष प्रदान करनेवाली देवी हैं। इनकी सच्ची उपासना और आराधना से भक्तों के सभी रोग, दुःख, कष्ट-क्लेश और बाधाएँ समाप्त हो जाती हैं।

सभी प्रकार के सुखों को प्रदान करनेवाली माता कूष्मांडा भक्तों की केवल भक्ति और सेवा से ही प्रसन्न होकर उन्हें मनोवांछित वर प्रदान करती हैं। इनकी नियमित साधना से साधकों को धन-संपत्ति और ऐश्वर्य के साथ-साथ मोक्ष की भी प्राप्ति हो जाती है। माता कूष्मांडा की पूजा-अर्चना मनुष्य को विभिन्न प्रकार की व्याधियों से विमुक्त कर, सुख-समृद्धि और उन्नति की ओर ले जाती है। भक्तों को शुद्ध और पवित्र मन से माता कूष्मांडा के स्वरूप को ध्यान में रखकर उनकी उपासना करनी चाहिए।

स्कंदमाता

स्कंदमाता माता दुर्गा के पाँचवें रूप में अवतरित हुईं। दुर्गा-पूजन में पाँचवें दिन स्कंदमाता की पूजा की जाती है। इनके पुत्र कुमार कार्तिकेय को स्कंद कहा जाता है, इसीलिए उनकी माता होने के कारण दुर्गा का यह स्वरूप 'स्कंदमाता' के नाम से प्रसिद्ध है।

स्कंदमाता की गोद में भगवान् स्कंद विराजमान होते हैं। स्कंदमाता की चार भुजाएँ हैं, जिनमें दो हाथों में कमल-पुष्प विभूषित हैं। एक हाथ वर-मुद्रा में और दूसरा हाथ भगवान् स्कंद को गोद में पकड़े हुए होता है। शुभ्र वर्ण की यह माता कमल के आसन पर आसीन रहती हैं, इस कारण ये पद्मासना देवी भी कहलाती हैं। सिंह भी इनका वाहन है।

सूर्य के समान तेजवाली स्कंदमाता अपने भक्तों की समस्त इच्छाओं को पूरी करनेवाली देवी हैं। इनकी निस्स्वार्थ भक्ति से साधक को सभी प्रकार की सिद्धियों और निधियों की प्राप्ति होती है।

स्कंदमाता की उपासना करने पर भक्त का हृदय शुद्ध हो जाता है। स्कंदमाता की उपासना करते समय साधक को अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण कर मन को एकाग्र करना चाहिए। उपासना के समय साधक का ध्यान लौकिक और सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर स्कंदमाता के स्वरूप में लीन होना चाहिए।

स्कंदमाता की उपासना की एक विशेषता यह भी है कि साधक द्वारा स्कंदमाता की पूजा-अर्चना करने से भगवान् स्कंद की उपासना भी स्वत: ही हो जाती है। इससे स्कंदमाता के साथ-साथ भगवान् स्कंद की कृपा-दृष्टि भी साधक को सहज ही प्राप्त हो जाती है।

यदि भक्त निस्स्वार्थ भावना से स्कंदमाता की पूजा-अर्चना करते हैं, तो वे उन्हें सुख-संपदा और ऐश्वर्य प्रदान करती हैं। स्कंदमाता की उपासना करनेवाले भक्त सूर्य के समान अलौकिक तेज और कांति से संपन्न हो जाते हैं। माता की आराधना मात्र से ही उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।

कात्यायनी

माता कात्यायनी दुर्गा के छठे अवतार के रूप में पूजी जाती हैं। छठे नवरात्रे को माता कात्यायनी की पूजा-अर्चना की जाती है। धार्मिक ग्रंथों के अनुसार माता कात्यायनी की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार है—

कात्य नाम के ऋषि की वंशावली में एक प्रसिद्ध ऋषि कात्यायन उत्पन्न हुए। महर्षि कात्यायन माता दुर्गा के परम भक्त थे। उन्होंने माता दुर्गा की अनेक वर्षों तक कठोर तपस्या की। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर माता दुर्गा ने उन्हें दर्शन दिए और

उनसे वर माँगने को कहा। तब महर्षि कात्यायन ने माता दुर्गा से वर माँगा कि 'वे पुत्री रूप में उनके घर में जन्म लें।'

माता दुर्गा ने महर्षि कात्यायन को इच्छित वर प्रदान कर दिया।

कुछ समय पश्चात् जब पृथ्वी पर महिषासुर नामक असुर का अत्याचार बढ़ गया, तब माता दुर्गा के तेज से महर्षि कात्यायन के घर में माता दुर्गा के छठे स्वरूप का जन्म हुआ। महर्षि कात्यायन के यहाँ जन्म लेने के कारण ये 'माता कात्यायनी' के नाम से प्रसिद्ध हुईं।

माता कात्यायनी ने जन्म लेते ही विशाल रूप धारण कर लिया। उनके इस विशाल रूप को देखकर महर्षि कात्यायन ने उन्हें प्रणाम किया और तीन दिन शुक्ल सप्तमी, अष्टमी तथा नवमी तक उनकी पूजा-अर्चना की। माता कात्यायनी ने महर्षि की पूजा ग्रहण करने के बाद महिषासुर का वध किया।

पुराणों में वर्णित एक अन्य कथा के अनुसार, जब ब्रह्मा, विष्णु और शिव के मिश्रित तेज से माता दुर्गा के छठे स्वरूप का जन्म हुआ, तब महर्षि कात्यायन ने सर्वप्रथम उनकी पूजा की। इस कारण उनका नाम 'कात्यायनी' पड़ा।

माता कात्यायनी भक्तों को अमोघ फल प्रदान करनेवाली देवी हैं। ब्रज की गोपियों ने भी भगवान् कृष्ण को पति-रूप में पाने के लिए यमुना के तट पर इनकी पूजा की थी। चार भुजाधारी माता कात्यायनी का वाहन सिंह है। मनुष्य के समस्त पापों का नाश करके उसे मोक्ष प्रदान करनेवाली माता कात्यायनी सहज भक्ति से प्रसन्न हो जाती हैं। इनकी उपासना से मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष मिलता है।

कालरात्रि

माता दुर्गा के सातवें स्वरूप को माता कालरात्रि के नाम से जाना जाता है। माता कालरात्रि की काया घने अंधकार के समान एकदम काली

है। इनके मस्तक पर तीन नेत्र विद्यमान हैं, जो ब्रह्मांड के समान गोल हैं।

माता कालरात्रि के सिर के केश घने और बिखरे हुए हैं। इनके गले में विद्युत् के समान प्रकाशमान माला सुशोभित है। श्वास लेते समय इनकी नासिका से अग्नि की तीव्र और भयंकर लपटें प्रकट होती हैं। यद्यपि इनका शरीर काला है, तथापि इनमें से विद्युत् के समान तेज प्रकाश-युक्त किरणें प्रकट होती हैं।

माता कालरात्रि का वाहन गर्दभ अर्थात् गदहा है। यह माता चार भुजाओंवाली हैं। इनके दो हाथों में क्रमशः खड्ग और नुकीला अस्त्र विभूषित है, जबकि एक हाथ वर मुद्रा में और दूसरा अभय मुद्रा में है।

भक्तों के लिए माता कालरात्रि का स्वरूप अत्यंत भयानक है, किंतु उन्हें ये देवी सदैव शुभ फल प्रदान करती हैं। अपने भक्तों को शुभ फल प्रदान करने के कारण इन्हें 'शुभंकरी' भी कहा जाता है।

माता कालरात्रि की पूजा-आराधना से भक्तों के समस्त पाप धुल जाते हैं और वे माता के दर्शन से मिलनेवाले पुण्य के भागी हो जाते हैं। यदि भक्त निस्स्वार्थ और भक्तिपूर्ण भावना से माता कालरात्रि की उपासना करते हैं तो उनके सभी कष्ट-क्लेशों का अंत हो जाता है और उन्हें सभी प्रकार के सुख व वैभवों की प्राप्ति होती है।

माता कालरात्रि दैत्य, दानव, राक्षस, भूत-प्रेत आदि का नाश करनेवाली देवी हैं। इनके स्मरण मात्र से ही भक्त की सभी ग्रह-बाधाएँ दूर हो जाती हैं। इनकी आराधना से भक्त भय-मुक्त हो जाते हैं। नवरात्रे के सातवें दिन कालरात्रि की पूजा की जाती है। शुभ फल प्राप्त करने के लिए पूजा करते समय भक्त को अपने मन को शुद्ध और पवित्र रखना चाहिए।

महागौरी

नारदजी से शिवजी को प्राप्त करने के लिए तपस्या का उपदेश मिलने पर देवी पार्वती ने कठोर तप करने का निश्चय किया। इसके लिए उन्होंने सभी प्रकार के सुखों को त्याग जंगल में रहकर कठोर तप आरंभ कर दिया।

यह तप अनेक वर्षों तक चला। तपस्या के दौरान उन्होंने धूप, आँधी, वर्षा और शीत का भीषण प्रकोप सहा, जिससे उनका शरीर धूल, मिट्‌टी और पत्तों से ढक गया। इसके फलस्वरूप उनका शरीर काला पड़ गया। अंत में जब भगवान् शिव ने उन्हें दर्शन देकर पत्नी-रूप में स्वीकार करने का वचन दिया, तब उन्होंने अपनी जटाओं में से निकलनेवाली गंगा द्वारा उनका शरीर मल-मलकर धोया।

पवित्र और शुद्ध गंगाजल के स्पर्श से देवी पार्वती के शरीर का सारा मैल धुल गया और उनका शरीर गौर वर्ण होकर दीप्तिमान हो उठा। इस प्रकार गौर वर्ण की होने के कारण माता पार्वती का नाम 'महागौरी' प्रसिद्ध हो गया।

दुर्गा-पूजन के आठवें दिन माता महागौरी की उपासना की जाती है। माता महागौरी की चार भुजाएँ हैं। उनका वाहन वृषभ है। उनकी यह मुद्रा अत्यंत शांत और सौम्य है।

इनकी पूजा-अर्चना से भक्तों के सभी पाप धुल जाते हैं। इनकी शक्ति अमोघ और फल प्रदान करनेवाली है। सच्चे हृदय से आराधना करने पर भक्तों के सभी दु:ख, क्लेश, ग्रह-बाधाएँ एवं पाप-संतापों का अंत हो जाता है और वे सभी प्रकार के पुण्यों को प्राप्त करने के अधिकारी बन जाते हैं।

माता महागौरी का ध्यान-स्मरण, पूजन-आराधन भक्तों के लिए कल्याणकारी है। इनकी उपासना करते समय साधकों को एकाग्रचित्त होकर माता महागौरी का ध्यान करना चाहिए। इनकी कृपा प्राप्त होने पर साधक को विभिन्न प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। भोग, ऐश्वर्य और मोक्ष प्रदान करनेवाली माता महागौरी सभी की मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं।

सिद्धिदात्री

नवरात्रे के नौवें और अंतिम दिन माता सिद्धिदात्री की पूजा की जाती है। माता सिद्धिदात्री सभी सिद्धियों की स्वामिनी हैं। अपने भक्तों को विभिन्न सिद्धियाँ प्रदान करनेवाली माता सिद्धिदात्री की कथा इस प्रकार है—

जब माता दुर्गा के मन में सृष्टि-रचना का विचार उत्पन्न हुआ, तब उन्होंने भगवान् शिव को उत्पन्न किया। शिवजी ने उत्पन्न होने पर माता दुर्गा से सिद्धियाँ प्रदान करने की प्रार्थना की। उन्हें सिद्धियाँ प्रदान करने के लिए माता दुर्गा के एक अंश से देवी सिद्धिदात्री का जन्म हुआ, जो सभी प्रकार की सिद्धियों की ज्ञाता थीं। माता दुर्गा के आदेशानुसार माता सिद्धिदात्री ने भगवान् शिव को अठारह प्रकार की दुर्लभ, अमोघ और शक्तिशाली सिद्धियाँ प्रदान कीं। इन सिद्धियों की प्राप्ति से ही शिवजी में दैवी तेज उत्पन्न हुआ।

माता सिद्धिदात्री से सिद्धियाँ प्राप्त करके शिवजी ने विष्णु की और विष्णुजी ने ब्रह्मा की उत्पत्ति की। ब्रह्माजी को सृष्टि-रचना का, विष्णु को सृष्टि के पालन-पोषण का और शिवजी को सृष्टि के संहार का कार्य मिला।

ब्रह्माजी को नर और नारी के अभाव के कारण सृष्टि-रचना में कठिनाई आने लगी। तब उन्होंने माता सिद्धिदात्री का स्मरण किया। माता सिद्धिदात्री के प्रकट होने पर ब्रह्माजी बोले, ''हे माता सिद्धिदात्री! नर-नारी के अभाव के कारण मुझे सृष्टि-रचना में कठिनाई आ रही है। आप अपनी सिद्धियों द्वारा मेरी इस समस्या का समाधान करें।''

ब्रह्माजी की बात सुनकर माता सिद्धिदात्री ने अपनी सिद्धियों द्वारा शिवजी का आधा शरीर नारी का बना दिया। इस प्रकार शिवजी आधे नर और आधे नारी के रूप के कारण अर्द्धनारीश्वर कहलाए। इस प्रकार ब्रह्माजी की समस्या का समाधन हो गया और सृष्टि-रचना का कार्य सुचारु रूप से चलने लगा।

माता सिद्धिदात्री कमल पुष्प पर विराजमान होती हैं। इनका वाहन सिंह है। माता सिद्धिदात्री चार भुजाओंवाली देवी हैं। सिद्धिदात्री की उपासना करने से साधकों की सभी इच्छाएँ पूर्ण होती हैं। माता सिद्धिदात्री अपने भक्तों और साधकों को सिद्धियाँ प्रदान करनेवाली देवी हैं।

पुराणों के अनुसार, माता सिद्धिदात्री अठारह प्रकार की सिद्धियाँ प्रदान करती हैं। ये सिद्धियाँ हैं—अणिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, महिमा, ईशित्व, सर्वकामावसायिता, सर्वज्ञात्व, दूरश्रवण, परकायप्रवेशन, वाक्‌सिद्धि, कल्पवृक्षत्व, सृष्टि, संहारकरणसामर्थ्य, अमरत्व, सर्वन्यायकत्व, भावना और सिद्धि।

माता सिद्धिदात्री की कृपा जिस पर हो जाती है, वह सारे सुखों को भोगते हुए अंत में मोक्ष को प्राप्त होता है। माता सिद्धिदात्री भक्तों की सभी लौकिक और पारलौकिक मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं। इनकी उपासना सभी कष्टों का अंत कर देती है।

□

एकादशी माहात्म्य

एक समय नैमिषारण्य में पुराणों की कथाओं को सुनने के निमित्त एकत्र हुए 88000 ऋषियों ने श्री सूतजी से प्रश्न किया—''महाराज! आने वाले कलियुग में प्राणियों का उद्धार कैसे होगा?''

उनके इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए वेदव्यासजी के शिष्य श्री सूतजी, जो सब पुराणों की कथाओं को अपने गुरु की कृपा से भली-भाँति जानते थे, कहने लगे—''हे ऋषियो! एक वर्ष के बारह महीनों की चौबीस अथवा जिस वर्ष में अधि मास होता है, उसकी दो मिलाकर कुल छब्बीस एकादशियाँ होती हैं, जिनके नाम मैं तुमसे कहता हूँ। इनके उच्चारण मात्र से बहुत से पाप नष्ट हो जाते हैं, आप ध्यानपूर्वक सुनिए।

1. उत्पन्ना	2. मोक्षदा	3. सफला
4. पुत्रदा	5. षट्‌तिला	6. जया
7. विजया	8. आमलकी	9. पापमोचनी
10. कामदा	11. वरूथिनी	12. मोहिनी
13. अपरा	14. निर्जला	15. योगिनी
16. देवशयनी	17. कामिका	18. पुत्रदा
19. अजा	20. वामन या परिवर्तिनी	21. इंदिरा
22. पापांकुशा	23. रमा	

24. देव प्रबोधनी या देवोत्थानी तथा अधि मास की दोनों एकादशियों के नाम क्रमानुसार, 25. पद्मिनी और 26. परमा हैं। इनके श्रवणमात्र से इनके नामों के अनुकूल ही फल प्राप्त होता है। जो प्राणी इनका व्रत तथा उद्यापन नहीं कर सकते, वे इनका सुनने मात्र से ही व्रत का फल प्राप्त कर सकते हैं।

अथ मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी व्रतकथा
मोक्षदा एकादशी

श्री युधिष्ठिर ने कहा, ''भगवन्, आप तीनों लोकों के स्वामी, सब को दु:ख देने वाले और जगत् के पति हैं। मैं आपको नमस्कार करता हूँ। हे देव! आप सबके हितैषी हैं, अत: मेरे संशय को दूर कर मुझे बताइए कि मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी का क्या नाम है? उस दिन कौन से देवता की पूजा की जाती है और उसकी विधि क्या है? भगवन्! कृपया आप मेरे प्रश्नों का विस्तारपूर्वक उत्तर दीजिए।''

यह सुनकर भक्तवत्सल श्रीकृष्णजी कहने लगे—''धर्मराज! तुमने बड़ा उत्तम प्रश्न किया है। इसके सुनने से तुम्हारा यश संसार में फैलेगा, सो आप सुनो।'' मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी का नाम मोक्षदा है। उस दिन दामोदर भगवान् की धूप, दीप, नैवेद्य आदि से भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। अब इस विषय में मैं एक पुराणों की कथा तुमसे कहता हूँ। इस एकादशी के व्रत के प्रभाव से नरक में गए हुए माता, पिता, पुत्रादि को स्वर्ग की प्राप्ति हो जाती है। यह कथा आप ध्यानपूर्वक सुनिए—गोकुल नाम के नगर में वैखानस नाम का एक राजा राज्य करता था। उसके राज्य में चारों वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण रहते थे। वह राजा अपनी प्रजा का पुत्रवत् पालन करता था। एक बार रात्रि को सोते समय राजा ने स्वप्न में देखा कि उसका पिता नरक में पड़ा हुआ है। इससे उसे बड़ा आश्चर्य हुआ और प्रात: होते ही विद्वान् ब्राह्मणों के पास जा अपनी स्वप्नकथा कहने लगा—''मैंने अपने पिता को नरक में पड़ा देखा है और उन्होंने मुझसे कहा है कि हे पुत्र! मैं नरक में पड़ा हूँ। यहाँ से तुम किसी प्रकार मेरी मुक्ति करो। जब से उनके ये वचन मैंने सुने हैं, मेरे मन में बड़ी अशांति हो रही है। मुझे इस राज्य, धन, पुत्र, स्त्री, हाथी, घोड़े, आदि में कुछ भी सुख प्रतीत नहीं होता। अब मैं क्या करूँ, कहाँ जाऊँ? इस दु:ख के कारण मेरा सारा शरीर जल रहा है। अब आप कृपया करके कोई तप, दान, व्रत आदि ऐसा उपाय बताइए, जिससे मेरे पिता की मुक्ति हो जाए। उस पुत्र

का जीवन व्यर्थ है, जो अपने माता-पिता का उद्धार न कर सके। एक उत्तम पुत्र जो अपने माता-पिता तथा पूर्वजों का उद्धार करता है, वह हजार मूर्ख पुत्रों से अच्छा है। जैसे एक चंद्रमा सारे जगत् में प्रकाश कर देता है, परंतु हजारों तारे नहीं कर पाते।''

राजा के ऐसे वचन सुनकर ब्राह्मण कहने लगे—''हे राजन्! यहाँ समीप ही भूत, भविष्य, वर्तमान के ज्ञाता पर्वत ऋषि का आश्रम है। आपके प्रश्नों का उत्तर वे भली-भाँति दे सकते हैं।'' ऐसा सुनकर राजा मुनि के आश्रम पर गया। उस आश्रम में अनेको शांत चित्त योगी और मुनि तपस्या कर रहे थे। उसी जगह चारों वेदों के ज्ञाता, साक्षात् ब्रह्मा के समान पर्वत ऋषि बैठे थे। राजा ने वहाँ जाकर उनको साष्टांग प्रणाम किया। पर्वत मुनि ने राजा से कुशल पूछी। राजा ने कहा, ''महाराज! आपकी कृपा से मेरे राज्य में सब कुशल है, परंतु अकस्मात् एक विघ्न आ गया है, जिससे मेरे मन में अत्यंत अशांति हो रही है।''

ऐसा सुनकर पर्वत मुनि ने एक क्षण के लिए अपनी आँखें बंद की और भूत-भविष्य को विचारने लगे, फिर बोले, ''राजन्! मैंने योगबल से तुम्हारे पिता के सब कुकर्मों को जान लिया है। उन्होंने पूर्व जन्म में कामातुर होकर एक पत्नी को रति दी, परंतु सौत के कहने पर दूसरी पत्नी को ऋतु दान मांगने पर भी नहीं दिया। उसी पाप कर्म के फल से तुम्हारे पिता को नरक में जाना पड़ा।''

तब राजा बोला, ''महात्मन्! मेरे पिता के उद्धार के लिए कोई उपाय बताइए।''

पर्वत मुनि बोले, ''राजन्! आप मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी को उपवास करें और उस उपवास के पुण्य को अपने पिता को संकल्प कर दें। उस एकादशी के पुण्य के प्रभाव से अवश्य ही आपके पिता की मुक्ति होगी।'' मुनि के वचनों को सुनकर राजा अपने महल में आया और कुटुंब सहित इस मोक्षदा एकादशी का व्रत किया। उस उपवास के पुण्य को राजा ने अपने

पिता को अर्पण कर दिया। उस पुण्य के प्रभाव से राजा के पिता को मुक्ति मिल गई।

वह स्वर्ग को जाते हुए अपने पुत्र से कहने लगा—''हे पुत्र! तेरा कल्याण हो। मार्गशीर्ष मास के शुक्लपक्ष की इस मोक्षदा एकादशी को जो व्रत करते हैं, उनके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और अंत में स्वर्गलोक को पाते हैं। इस व्रत से बढ़कर मोक्ष देनेवाला और कोई व्रत नहीं है। इस कथा को पढ़ने या सुनने से वाजपेय यज्ञ का फल मिलता है। यह व्रत मोक्ष देनेवाला तथा चिंतामणि के समान सब कामनाएँ पूरी करनेवाला है।''

अथ पौष शुक्ला एकादशी व्रतकथा

पुत्रदा एकादशी

युधिष्ठिर ने कहा, ''हे भगवन्! आपने सफला एकादशी का माहात्म्य विधिवत् बताकर बड़ी कृपा की। अब कृपा करके यह बताइए कि पौष शुक्ला एकादशी का क्या नाम है, उसकी विधि क्या है और इसमें कौन-से देवता की पूजा की जाती है?''

श्रीकृष्ण बोले, ''हे राजन्! इस एकादशी का नाम पुत्रदा एकादशी है। इसमें भी नारायण भगवान् की पूजा की जाती है। इस चर और अचर संसार में पुत्रदा एकादशी के व्रत के समान कोई दूसरा व्रत नहीं है। इसके पुण्य से मनुष्य तपस्वी, विद्वान् और लक्ष्मीवान् होता है। इसकी मैं एक कथा कहता हूँ, तुम ध्यानपूर्वक सुनो।''

भद्रावती नामक नगरी में सुकेतुमान नाम का एक राजा राज्य करता था। उसके कोई पुत्र नहीं था। उसकी स्त्री का नाम शैव्या था। वह निपुत्री होने के कारण सदैव चिंतित रहा करती थी। राजा के पितर भी रो-रोकर पिंड लिया करते थे और सोचा करते थे कि इसके बाद हमको कौन पिंड देगा। राजा को भाई, बांधव, धन, हाथी, घोड़े, राज्य और मंत्री इन सबमें से किसी चीज से भी संतोष नहीं होता था। इसका एक मात्र कारण पुत्र का न होना था। वह

सदैव यही विचार करता था कि मेरे मरने के बाद मुझको कौन पिंड दान करेगा। बिना पुत्र के पितरों और देवताओं का ऋण मैं कैसे चुका सकूँगा। जिस घर में पुत्र न हो, उसमें सदैव ही अँधेरा रहता है, इसलिए मुझे पुत्र की उत्पत्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। जिस मनुष्य ने पुत्र का मुख देखा है, वह धन्य है, उसको इस लोक में यश और परलोक में शांति मिलती है, अर्थात् उसके दोनों लोक सुधर जाते हैं। पूर्व जन्म के कर्म से ही इस जन्म में पुत्र, धन आदि प्राप्त होते हैं। राजा इसी प्रकार दिन-रात चिंता में लगा रहता था। एक बार राजा ने अपने शरीर को त्याग देने का विचार किया, परंतु आत्मघात को पाप समझकर उसने ऐसा नहीं किया, एक दिन राजा ऐसा ही विचार करता हुआ अपने घोड़े पर चढ़कर वन को चल दिया और पक्षियों व वृक्षों को देखने लगा। उसने देखा कि वन में मृग, व्याघ्र, सुअर, सिंह, बंदर, सर्प आदि सब भ्रमण कर रहे हैं। हाथी अपने बच्चों और हथिनियों के साथ घूम रहा है। इस वन में कहीं तो गीदड़ अपने कर्कश स्वर में बोल रहे हैं, कहीं उल्लू ध्वनि कर रहे हैं। वन के दृश्यों को देखकर राजा सोच-विचार में लग गया। इसी प्रकारा उसके दो पहर बीत गए। वह सोचने लगा कि मैंने कई यज्ञ किए, ब्राह्मणों को स्वादिष्ट भोजन से तृप्त किया, फिर भी मुझे यह दु:ख क्यों प्राप्त हुआ?

राजा प्यास के मारे अत्यंत दुखी हो गया और पानी की तलाश में इधर-उधर फिरने लगा। थोड़ी दूर पर राजा ने एक सरोवर देखा। उस सरोवर में कमल खिल रहे थे तथा सारस, हंस, मगरमच्छ आदि विहार कर रहे थे। उस सरोवर के चारों तरफ मुनियों के आश्रम बने हुए थे। उस समय राजा के दाहिने अंग फड़कने लगे। राजा शुभ शकुन समझकर घोड़े से उतरा और मुनियों को दंडवत् प्रणाम करके उनके सामने बैठ गया।

राजा को देखकर मुनियों ने कहा, ''हे राजन्! हम तुमसे अत्यंत प्रसन्न हैं। अपनी इच्छा कहे।'' राजा ने उनसे पूछा, ''महाराज आप कौन हैं और किसलिए यहाँ आए हैं, सो कहिए?''

मुनि बोले, ''हे राजन्! आज संतान देनेवाली पुत्रदा एकादशी है। हम लोग विश्वदेव हैं और इस सरोवर पर स्नान करने के लिए आए हैं।''

इस पर राजा कहने लगा, ''महाराज! मेरे भी कोई संतान नहीं है। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तो एक पुत्र का वरदान दीजिए।''

मुनि बोले, ''हे राजन्! आज पुत्रदा एकादशी है, आप इसका व्रत करें। भगवान् की कृपा से अवश्य ही आपके पुत्र होगा।'' मुनि के वचनों के अनुसार राजा ने उस दिन एकादशी का व्रत किया और द्वादशी को उसका पारण किया। इसके पश्चात् मुनियों को प्रणाम करके राजा अपने महल में वापस आ गया। कुछ समय के बाद रानी ने गर्भ धारण किया और नौ महीने के पश्चात् उसके एक पुत्र हुआ। वह राजकुमार अत्यंत शूरवीर, धनवान् यशस्वी तथा प्रजापालक हुआ।

श्रीकृष्ण भगवान् बोले, ''हे राजन्! पुत्र की प्राप्ति के लिए पुत्रदा एकादशी का व्रत करना चाहिए। जो मनुष्य इस माहात्म्य को पढ़ता या सुनता है, उसको अंत में स्वर्ग की प्राप्ति होती है।''

अथ ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी व्रतकथा

निर्जला एकादशी

भीमसेन व्यासजी से कहने लगे, ''हे पितामह! भ्राता युधिष्ठिर माता कुंती, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव आदि सब एकादशी का व्रत करने को कहते हैं, परंतु महाराज मैं उनसे कहता हूँ कि भाई मैं विधिवत् भगवान् की पूजा आदि तो कर सकता हूँ, दान भी दे सकता हूँ, परंतु भोजन के बिना नहीं रह सकता।''

इस पर व्यासजी कहने लगे, ''हे भीमसेन! यदि तुम नरक को बुरा और स्वर्ग को अच्छा समझते हो तो प्रति मास की दोनों एकादशियों को अन्न मत खाया करो।''

भीमसेन कहने लगे, ''हे पितामह! मैं तो पहले ही कह चुका हूँ कि मैं

भूख सहन नहीं कर सकता।'' यदि वर्ष में कोई एक ही व्रत हो तो वह मैं रख सकता हूँ; क्योंकि मेरे पेट में वृक नामवाली अग्नि है, सो मैं भोजन के बिना नहीं रह सकता। भोजन करने से वह शांत रहती है, इसलिए पूरा उपवास तो क्या एक समय भी बिना भोजन किए रहना कठिन है। अत: आप मुझको कोई ऐसा व्रत बताइए जो वर्ष में केवल एक बार ही करना पड़े और मुझे स्वर्ग की प्राप्ति हो जाए।

श्री व्यासजी कहने लगे, ''हे पुत्र! बड़े-बड़े ऋषियों ने अनेक शास्त्र आदि बनाए हैं, जिनसे बिना धन के थोड़े परिश्रम से ही स्वर्ग की प्राप्ति हो सकती है।'' इसी प्रकार शास्त्रों में दोनों पक्षों की एकादशी का व्रत मुक्ति के लिए लिखा है।

श्री व्यासजी के वचन सुनकर भीमसेन नरक में जाने के भय से भयभीत हो गए और काँपकर कहने लगे, ''अब मैं क्या करूँ! मास में दो व्रत तो मैं कर नहीं सकता, हाँ वर्ष में एक व्रत करने का प्रयत्न अवश्य कर सकता हूँ। अत: वर्ष में एक दिन व्रत करने से यदि मेरी मुक्ति हो जाए तो ऐसा कोई व्रत बतलाइए।''

यह सुनकर व्यासजी कहने लगे, ''वृष और मिथुन की संक्रांति के बीच ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष की जो एकादशी आती है, उस एकादशी का नाम निर्जला है, तुम उस एकादशी का व्रत करो। इस एकादशी के व्रत में स्नान और आचमन के सिवा जल वर्जित है। आचमन में छह माशे जल से अधिक जल नहीं होना चाहिए, अन्यथा वह मद्यपान के सदृश हो जाता है। इस दिन भोजन नहीं करना चाहिए; क्योंकि भोजन करने से व्रत नष्ट हो जाता है।''

यदि एकादशी को सूर्योदय से लेकर द्वादशी को सूर्योदय तक जल ग्रहण न करे तो उसे सारी एकादशियों के व्रत का फल प्राप्त होता है। द्वादशी को सूर्योदय से पहले उठकर स्नान आदि करके ब्राह्मणों को दान आदि देना चाहिए। इसके पश्चात् भूखे और सत्पात्र ब्राह्मण को भोजन कराकर, फिर खुद भी भोजन कर लेना चाहिए। इसका फल एक वर्ष की संपूर्ण एकादशियों

के फल के बराबर होता है।

व्यासजी कहने लगे, ''हे भीमसेन! यह मुझको स्वयं भगवान् ने बतलाया है। इस एकादशी का पुण्य समस्त तीर्थों और दानों से भी अधिक है। केवल एक दिन मनुष्य निर्जल रहने से पापों से मुक्त हो जाता है। जो मनुष्य निर्जला एकादशी का व्रत करते हैं, उनको मृष्यु के समय यमदूत आकर नहीं घेरते, वरन् भगवान् के पार्षद उसको पुष्पक विमान में बैठाकर स्वर्ग को ले जाते हैं।'' अत: संसार में सबसे श्रेष्ठ निर्जला एकादशी का व्रत है, इसलिए यत्न के सथ इस व्रत को करना चाहिए। उस दिन 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' इस मंत्र का उच्चारण करना चाहिए और गौ का दान भी करना चाहिए। इस प्रकार व्यासजी की आज्ञानुसार भीमसेन ने इस व्रत को किया, इसीलिए इस एकादशी को भीमसेन या पांडव एकादशी भी कहते हैं। निर्जला व्रत करने से प्रथम भगवान् का पूजन करके यह प्रार्थना करें—''हे भगवान्! आज मैं श्रद्धापूर्वक निर्जला व्रत रखकर दूसरे दिन भोजन करूँगा। अत: आपकी कृपा से मेरे सब पाप नष्ट हो जाएँ। इस दिन जल से भरा हुआ एक घड़ा वस्त्र से ढककर स्वर्ण सहित दान करना चाहिए।''

जो मनुष्य इस व्रत को करते हैं, उनको करोड़ पल सोने के दान का फल मिलता है और जो इस दिन यज्ञादि करते हैं, उनका फल तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। इस एकादशी के व्रत से मनुष्य विष्णुलोक को प्राप्त होता है। जो मनुष्य इस दिन अन्न खाते हैं, वे चंडाल के समान हैं, वे अंत में नरक में जाते हैं। जिन्होंने निर्जला एकादशी का व्रत किया है, वह चाहे ब्रह्महत्यारे हों, मद्यपान करते हों, चोरी करते हों या गुरु के साथ द्वेष करनेवाले हों, मगर इस व्रत के करने से सब स्वर्ग में जाते हैं।

हे कुंतिपुत्र! जो पुरुष या स्त्री श्रद्धापूर्वक इस व्रत को करते हैं, उनको निम्नलिखित कर्म करने चाहिए। प्रथम भगवान् का पूजन, फिर गौदान, ब्राह्मणों को मिष्टान्न व दक्षिणा देनी चाहिए तथा जल से भरे कलश का दान अवश्य करना चाहिए। निर्जला के दिन अन्न, वस्त्र, पात्र, उपानह जूती आदि का दान

भी करना चाहिए। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस कथा को पढ़ते या सुनते हैं, उनको निश्चय ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

अथ कार्तिक शुक्ला एकादशी व्रतकथा

देव प्रबोधिनी एकादशी

ब्रह्माजी बोले, ''हे मुनिश्रेष्ठ! अब पापों को हरनेवाली पुण्य और मुक्ति देनेवाली एकादशी का माहात्म्य सुनिए। पृथ्वी पर गंगा की महत्ता और समुद्रों तथा तीर्थों का प्रभाव तभी तक है, जब तक कार्तिक मास की देव प्रबोधिनी एकादशी नहीं आती। मनुष्य को जो फल एक हजार अश्यमेघ और एक सौ राजसूय यज्ञों से मिलता है, वही देव प्रबोधिनी एकादशी के व्रत से मिलता है।''

तब नारदजी ने पूछा, ''हे पिता! एक समय भोजन करने, रात्रि को भोजन करने तथा सारे दिन उपवास करने से क्या फल मिलता है, सो आप विस्तारपूर्वक समझाइए।''

ब्रह्माजी बोले, ''हे पुत्र! एक बार भोजन करने से एक जन्म और रात्रि को भोजन करने से दो जन्म तथा पूरा दिन उपवास करने से सात जन्मों के पाप नष्ट होते हैं। जो वस्तु त्रिलोकी में न मिल सके और दिखाई न दे सके, वह हरि प्रबोधिनी एकादशी से प्राप्त हो सकती है। मेरु और मंदराचचल के समान भारी पाप भी नष्ट हो जाते हैं तथा अनेक जन्म में किए हुए पाप-समूह क्षणभर में भस्म हो जाते हैं। जैसे रुई के बड़े भारी ढेर को अग्नि की छोटी सी चिंगारी भस्म कर देती है, वैसे ही विधिपूर्वक थोड़ा सा पुण्य कर्म अनंत का फल देता है, परंतु विधि रहित चाहे अधिक किया जाए तो भी उसका फल कुछ नहीं मिलता। संध्या न करनेवाले नास्तिक, वेद निंदक, धर्मशस्त्र को दूषित करनेवाले मूर्ख, दूसरे की स्त्री का अपहरण करनेवाले, पाप कर्मों में सदैव लगे रहनेवाले, धोखा देनेवाले, ब्राह्मण से भोग करनेवाले ये सब चांडाल के समान हैं, जो विधवा अथवा सधवा ब्राह्मणी से भोग करते

हैं, वे अपने कुल को नष्ट कर देते हैं। पर-स्त्रीगामी के संतान नहीं होती और उसके पूर्वजन्म के संचित सब अच्छे कर्म नष्ट हो जाते हैं। जो गुरु और ब्राह्मणों से अहंकारयुक्त बात करता है, वह भी धन और संतान से हीन होता है। भ्रष्टाचार करनेवाला, चांडाली से भोग करनेवाला, दुष्ट की सेवा करनेवाला और जो नीच मनुष्य की सेवा करते हैं या संगत करते हैं, ये सब पाप हरि प्रबोधिनी के व्रत से नष्ट हो जाते हैं। जो मनुष्य अपने-अपने मन में हरि प्रबोधिनी एकादशी के व्रत को करने का संकल्प मात्र करते हैं, उनके सौ जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं और जो रात्रि को जागरण करते हैं, उनकी आनेवाली दस हजार पीढ़ियाँ स्वर्ग में जाती हैं। नरक के दु:खों से छूटकर प्रसन्नता के साथ सुसज्जित होकर वे विष्णुलोक को जाते हैं, ब्रह्महत्यादि जघन्य पाप भी इस व्रत के प्रभाव से नष्ट हो जाते हैं। जो फल समस्त तीर्थों में स्नान करने, गौ, स्वर्ण और भूमि का दान करने से होता है, वही फल एकादशी की रात्रि को जागरण से मिलता है।

''हे मुनिशार्दूल! इस संसार में उसी मनुष्य का जीवन सफल है, जिसने हरि प्रबोधिनी एकादशी का व्रत किया है। इस संसार में जितने भी तीर्थ हैं, उन सबके स्नान दानादि का फल इस व्रत से मिलता है। अत: और सब कर्मों को त्यागकर भगवान् के प्रसन्नार्थ कार्तिक शुक्ला हरि प्रबोधिनी का व्रत करना चाहिए। वही ज्ञानी तपस्वी तथा जितेंद्रिय है और उसी को भोग तथा मोक्ष प्राप्त होता है, जिसने हरि प्रबोधिनी एकादशी का व्रत किया है। यह विष्णु को अत्यंत प्रिय, मोक्ष के द्वार को बतानेवाली तथा उसके तत्त्व का ज्ञान देनेवाली है। जिसने एक बार भी इसका व्रत किया, वह मोक्ष का अधिकारी हो जाता है। मन, कर्म, वचन तीनों प्रकार के पाप इस रात्रि को केवल जागरण करने से नाश हो जाते हैं। हरि प्रबोधिनी के दिन जो मनुष्य भगवान् के प्रसन्नार्थ स्नान, दान, तप व यज्ञादि करते हैं, वे अक्षय पुण्य को प्राप्त होते हैं। हरि प्रबोधिनी एकादशी के दिन व्रत करने से मनुष्य के बाल, यौवन और वृद्धावस्था में किए गए समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। इस एकादशी को रात्रि में जागरण का फल चंद्र, सूर्य ग्रहण के समय स्नान करने से हजार गुना

अधिक होता है। अन्य कोई भी पुण्य इसके सामने व्यर्थ है। जो मनुष्य हरि प्रबोधिनी का व्रत नहीं करते, उनके सब पुण्य व्यर्थ हैं।

अत: हे नारद! तुमको भी विधिपूर्वक यत्न के साथ इस व्रत को करना चाहिए। जो कार्तिक मास में धर्म परायण होकर अन्न नहीं खाते हैं, उन्हें चांद्रायण व्रत का फल प्राप्त होता है। कार्तिक मास में भगवान् दानादि से इतने प्रसन्न नहीं होते, जितने की शास्त्रों की कक्षाओं के सुनने से होते हैं। कार्तिक मास में जो भगवान् विष्णु की कथा का एक या आधा श्लोक भी पढ़ते-सुनते या सुनाते हैं। अत: अन्य सब कर्मों को छोड़कर कार्तिक मास में मेरे सम्मुख बैठकर मेरी कथा पढ़नी या सुननी चाहिए। जो कल्याण के लिए कार्तिक मास में हरि कथा कहते हैं, वे सारे कुटुंब का क्षणमात्र में उद्धार कर देते हैं। शास्त्रों की कथा कहने और सुनने से दस हजार यज्ञों का फल मिलता है, साथ ही उनके सब पाप भस्म हो जाते हैं। जो नियमपूर्वक हरि कथा सुनते हैं, वे एक हजार गौ दान का फल पाते हैं। विष्णु के जागने के दिन जो भगवान् की कथा सुनते हैं, वे सातों द्वीपों समेत पृथ्वी के दान करने का फल पाते हैं। जो मनुष्य भगवान् की कथा को सुनकर वाचक को अपनी सामर्थ्य के अनुसार दक्षिणा देते हैं, उनको सनातन लोक मिलता है।

ब्रह्माजी की यह बात सुनकर नारद मुनि ने कहा, ''भगवन्! एकादशी के व्रत की क्या विधि है, कैसा व्रत करने से क्या फल मिलता है, वह भी विस्तारपूर्वक समझाकर कहिए।''

नारद मुनि की बात सुनकर ब्रह्माजी कहने लगे, ''ब्रह्ममुहूर्त में जब दो घड़ी रात्रि रह जाए, तब उठकर शौच आदि से निवृत्त होकर दंत-धावन आदि करें, उसके बाद नदी, तालाब, कुआँ, बावड़ी या घर में ही जैसा संभव हो स्नानादि करें, फिर भगवान् की पूजा करके कथा सुने और फिर व्रत का नियम पालन करना चाहिए।''

उस समय भगवान् से विनय करें—''हे भगवन्! आज मैं निराहार रहकर व्रत करूँगा, आप मेरी रक्षा कीजिए। दूसरे दिन द्वादशी को भोजन करूँगा।''

तत्पश्चात् भक्ति-भाव से व्रत करें तथा रात्रि को भगवान् के आगे नृत्य, गीतादि करना चाहिए। प्रबोधिनी एकादशी को कृषणता को त्यागकर बहुत से पुष्प, फल, अगर, धूप आदि से भगवान् का पूजन करना चाहिए। शंख के जल से भगवान् को अर्घ्य देवें। इसका समस्त तीर्थों से करोड़ गुना फल मिलता है। जो मनुष्य अगस्त्य के पुष्प से भगवान् का पूजन करते हैं, उनके आगे इंद्र भी हाथ जोड़ता है। तपस्या करके संतुष्ट होने पर हरि भगवान् जो नहीं करते, वह अगस्त्य के पुष्पों से भगवान् को अलंकृत करने से करते हैं। जो कार्तिक मास में बिल्वपात्र से भगवान् की पूजा करते हैं, वे मुक्ति को प्राप्त होते हैं।

कार्तिक मास में जो तुलसी से भगवान् का पूजन करते हैं, उनके दस हजार जन्मों के पाप नष्ट हो जाते हैं। तुलसी दरशन करने, स्पर्श करने, कथा कहने, नमस्कार करने, स्तुति करने, तुलसी रोपण, जल से सींचने और प्रतिदिन पूजन सेवा आदि करने से हजार करोड़ युगपर्यंत विष्णुलोक में निवास करते हैं। जो तुलसी का पेड़ लगाते हैं, उनके कुटुंब में उत्पन्न होने वाले प्रलयकाल तक विष्णुलोक में निवास करते हैं। ''हे मुनि! रोपी हुई तुलसी जितनी जड़ों का विस्तार करती है, उतने ही हजार युगपर्यंत तुलसी रोपण करनेवाले के सुकृत का विस्तार होता है। जिस मनुष्य की रोपण की हुई तुलसी की जितनी शाखा, प्रशाखा, बीज और फल पृथ्वी में बढ़ते हैं, उसके उतने ही कुल जो बीत गए हैं तथा होंगे, दो हजार कल्प तक विष्णुलोक में निवास करते हैं। जो कदंब के पुष्पों से हरि का पूजन करते हैं, वे भी कभी यमराज को नहीं देखते। जो गुलाब के पुष्पों से भगवान् का पूजन करते हैं, उन्हें मुक्ति मिलती है। जो वकुल और अशोक के फूलों से भगवान् का पूजन करते हैं, वे सूय्र, चंद्रमा के रहने तक किसी प्रकार का शोक नहीं पाते। जो मनुष्य सफेद या लाल कनेर के फूलों से भगवान् का पूजन करते हैं, उन पर भगवान् अत्यंत प्रसन्न रहते हैं और जो भगवान् पर आम की मंजरी चढ़ाते हैं, वे करोड़ों गौओं के दान का फल पाते हैं। जो दूब के अंकुरों से भगवान् की पूजा करते हैं, वे सौ गुना पूजा का फल पाते हैं। जो शमी के पत्र से भगवान् की पूजा

करते हैं, उनको महाघोर यमराज के मार्ग का भय नहीं रहता। जो भगवान् का चंपा के फूलों से पूजन करते हैं, वे मनुष्य फिर संसार में नहीं आते। जो मनुष्य केतकी का पुष्प भगवान् पर चढ़ाते हैं, उनके करोड़ों जन्म के पाप नष्ट हो जाते हैं, जो पीले रक्तवर्ण के कमल के पुष्पों से भगवान् का पूजन करते हैं, उनको श्वेत द्वीप में स्थान मिलता है। इस प्रकार रात्रि को भगवान् का पूजन कर प्रात:काल होने पर उठकर नदी पर जाएँ और वहाँ स्नान, जप तथा प्रात:काल के कर्म करके घर पर आकर विधिपूर्वक भगवान् केशवल का पूजन करें। व्रत की समाप्ति पर विद्वान् ब्रह्मणों को भोजन कराएँ और दक्षिणा देकर क्षमा याचना करें। इसके पश्चात् भोजन, गौ और दक्षिणा देकर गुरु का पूजन करें, ब्राह्मणों को दक्षिणा दें और जो चीज व्रत के आरंभ में छोड़ने का निश्चय किया था, वह ब्राह्मणों को दें।

''हे राजन्! रात्रि में भोजन करनेवाला मनुष्य ब्रह्मणों को भोजन कराएँ और स्वर्ण सहित बैल का दान करें। जो मनुष्य मांसाहारी नहीं है, वह गौ का दान करें। आँवले से स्नान करनेवाले मनुष्य को दही और शहद का दान करना चाहिए। जो मनुष्य फलों को त्यागे, वह फलदान करे। तेल छोड़ने पर घृत और घृत छोड़ने पर दूध, अन्न छोड़ने पर चावल का दान दिया जाता है। जो भूमि शयन का व्रत लेते हैं, उनको शय्या दान तथा तुलसी सब सामग्री सहित देनी चाहिए। पत्ते पर भोजन करनेवाले को स्वर्ण का पत्ता घृत सहित देना चाहिए। मौन व्रत धारण करनेवाले को ब्राह्मण और ब्राह्मणी को घृत तथा मिठााई का भोजन करना चाहिए। बाल रखनेवाले को दर्पण, जूता छोड़नेवाले को एक जोड़ी जूता, लवण त्यागनेवाले को शर्करा दान करनी चाहिए। मंदिर में दीपक जलानेवाले को तथा नियम लेनेवाले को व्रत की समाप्ति पर ताम्र अथवा स्वर्ण के पत्र पर घृत और बत्ती रखकर विष्णु भक्त ब्राह्मण को दान देना चाहिए। एकांत व्रत में आठ कलश, वस्त्र और स्वर्ण से अलंकृत करके दान करना चाहिए। यदि यह भी न हो सके तो इनके अभाव में ब्राह्मणों का सत्कार सब व्रतों की सिद्धि देनेवाला कहा गया है। इस प्रकार ब्राह्मण को प्रणाम करके विदा करें। इसके पश्चात् स्वयं भी भोजन करें। जिन वस्तुओं

को चातुर्मास में छोड़ा हो, उन वस्तुओं की समाप्ति करें, अर्थात् ग्रहण करने लग जाएँ।

''हे राजन्! जो बुद्धिमान् इस प्रकार चातुर्मास व्रत निर्विघ्न समाप्त करते हैं, वे कृतकृत्य हो जाते हैं और फिर उनका जन्म नहीं होता। यदि व्रत भ्रष्ट हो जाए तो व्रत करनेवाला अंधा या कोढ़ी हो जाता है।

भगवान् कृष्ण कहते हैं—''हे राजन्! जो तुमने पूछा था, वह मैंने बतलाया। इस कथा को पढ़ने तथा सुनने से गौ दान का फल प्राप्त होता है।''

□

अथ श्रीराम रक्षा स्तोत्रम्

चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम्।
एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम्॥ १॥

श्री रघुनाथजी का चरित्र सौ करोड़ विस्तार वाला है और उसका एक-एक अक्षर भी मनुष्यों के महान् पापों को नष्ट करनेवाला है।

ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम्।
जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमण्डितम्॥ २॥
सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचारान्तकम्।
स्वलीलया जगत्त्रातुमाविर्भूतमजं विभुम्॥ ३॥
रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम्।
शिरो मे राघवः पातु भालं दशारथात्मजः॥ ४॥

जो नीलकमल के समान श्याम वर्ण, कमलनयन, जटाओं के मुकुट से सुशोभित, हाथों में खड्ग, तूणीर, धनुष और बाण धारण करनेवाले, राक्षसों के संहारकारी तथा संसार की रक्षा के लिए अपनी लीला से ही अवतीर्ण हुए हैं, उन अजन्मा और सर्वव्यापक भगवान् राम का जानकी और लक्ष्मणजी के सहित स्मरण कर प्राज्ञ पुरुष इस सर्व कामप्रदा और पाप विनाशिनी राम रक्षा का पाठ करे। मेरे सिर की राघव और ललाट की दशरथात्मज रक्षा करें।

कौसल्येयो दृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती।
घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः॥ ५॥

कौसल्यानंदन नेत्रों की रक्षा करें, विश्वामित्र प्रिय कानों को सुरक्षित रखें तथा यज्ञ रक्षक घ्राण की और सौमित्रि-वत्सल मुख की रक्षा करें।

जिह्वां विद्यानिधिः पातु कण्ठं भरतवन्दितः।
स्कन्धौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः॥ ६॥

मेरी जिह्वा की विद्यानिधि, कंठ की भरत वंदित, कंधों की दिव्यायुध और भुजाओं की भग्नेशकार्मुक (महादेवजी का धनुष तोड़नेवाले) रक्षा करें।

करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्न्यजित्।
मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जाम्बवदाश्रयः॥ ७॥

हाथों की सीतापति, हृदय की जामदग्न्यजित् (परशुरामजी को जीतनेवाले), मध्य भाग की खरध्वंसी (खर नाम के राक्षस का नाश करनेवाले) और नाभि की जांबवदाश्रय (जांबवान् के आश्रय स्वरूप) रक्षा करें।

सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः।
ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत्॥ ८॥

कमर की सुग्रीवेश (सुग्रीव के स्वामी), सक्थियों की हनुमत्प्रभु और ऊरुओं की राक्षस कुल-विनाशक रघुश्रेष्ठ रक्षा करें।

जानुनी सेतुकृत्पातु जङ्घे दशमुखान्तकः।
पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः॥ ९॥

जानुओं की सेतुकृत्, जंघाओं की दशमुखांतक (रावण को मारनेवाले), चरणों की विभीषणश्रीद (विभीषण का ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले) और संपूर्ण शरीर की श्रीराम रक्षा करें।

एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत्।
स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत्॥ १०॥

जो पुण्यवान् पुरुष राम बल से संपन्न इस रक्षा का पाठ करता है, वह दीर्घायु, सुखी, पुत्रवान्, विजयी और विनय संपन्न हो जाता है।

पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः।
न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः॥ ११॥

जो जीव पाताल, पृथ्वी अथवा आकाश में विचरते हैं और जो छद्म वेश में घूमते रहते हैं, वे रामनाम से सुरक्षित पुरुष को देख भी नहीं सकते।

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन्।
नरो न लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति॥ १२॥

'राम', 'रामभद्र', 'रामचंद्र'—इन नामों का स्मरण करने से मनुष्य पापों से लिप्त नहीं होता तथा भोग और मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

जगज्जैत्रैकमन्त्रेण रामनाम्नाभिरक्षितम्।
यः कण्ठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः॥ १३॥

जो पुरुष जगत् को विजय करने वाले एकमात्र मंत्र राम नाम से सुरक्षित इस स्तोत्र को कंठ में धारण करता है (अर्थात् इसे कंठस्थ कर लेता है), संपूर्ण सिद्धियाँ उसके हस्तगत हो जाती हैं।

वज्रपञ्जरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत्।
अव्याहताज्ञः सर्वत्र लभते जयमङ्गलम्॥ १४॥

जो मनुष्य वज्र पंजर नामक इस राम कवच का स्मरण करता है, उसकी आज्ञा का कहीं उल्लंघन नहीं होता और उसको सर्वत्र जय और मंगल की प्राप्ति होती है।

आदिष्टवान्यथा स्वप्ने रामरक्षामिमां हरः।
तथा लिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः॥ १५॥

श्री शंकर ने रात्रि के समय स्वप्न में इस राम रक्षा का जिस प्रकार आदेश दिया था, उसी प्रकार प्रातः काल जागने पर बुध कौशिक ने इसे लिख दिया।

आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम्।
अभिरामस्त्रिलोकानां रामः श्रीमान्स नः प्रभुः॥ १६॥

जो मानो कल्प वृक्षों के बगीचे हैं तथा समस्त आपत्तियों का अंत करने वाले हैं, जो तीनों लोकों में परम सुंदर हैं, वे श्रीमान् राम हमारे प्रभु हैं।

तरुणौ रूपसम्पन्नौ सुकुमारौ महाबलौ।
पुण्डरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनाम्बरौ॥ १७॥

फलमूलाशिनौ दान्तौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ।
पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ॥ १८॥
शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम्।
रक्षःकुलनिहन्तारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ॥ १९॥

जो तरुण अवस्था वाले, रूपवान्, सुकुमार, महाबली, कमल के समान विशाल नेत्रों वाले, चीर वस्त्र और कृष्ण मृग चर्मधारी, फल-मूल आहार करने वाले, संयमी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, संपूर्ण जीवों को शरण देने वाले, समस्त धनुर्धारियों में श्रेष्ठ और राक्षस कुल का नाश करने वाले हैं, वे रघु श्रेष्ठ दशरथ कुमार राम और लक्ष्मण दोनों भाई हमारी रक्षा करें।

आत्तसज्जधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषङ्गसङ्गिनौ।
रक्षणाय मम रामलक्ष्मणावग्रतः पथि सदैव गच्छताम्॥ २०॥

जिन्होंने संधान किया हुआ धनुष ले रखा है, जो बाण का स्पर्श कर रहे हैं तथा अक्षय बाणों से युक्त तूणीर लिये हुए हैं, वे राम और लक्ष्मण मेरी रक्षा करने के लिए मार्ग में सदा ही मेरे आगे चलें।

सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो युवा।
गच्छन्मनोरथान्नश्च रामः पातु सलक्ष्मणः॥ २१॥

सर्वदा उद्यत, कवचधारी, हाथ में खड्ग लिये, धनुष-बाण धारण किए तथा युवा अवस्थावाले भगवान् राम लक्ष्मणजी सहित आगे-आगे चलकर हमारे मनोरथों की रक्षा करें।

रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली।
काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः कौसल्येयो रघूत्तमः॥ २२॥
वेदान्तवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः।
जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः॥ २३॥
इत्येतानि जपन्नित्यं मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः।
अश्वमेधाधिकं पुण्यं सम्प्राप्नोति न संशयः॥ २४॥

(भगवान् का कथन है कि) राम, दाशरथि, शूर, लक्ष्मणानुचर, बली, काकुत्स्थ, पुरुष, पूर्ण, कौसल्येय, रघुत्तम, वेदान्तवेद्य, यज्ञेश, पुराण पुरुषोत्तम,

जानकी वल्लभ, श्रीमान् और अप्रमेय पराक्रम—इन नामों का नित्यप्रति श्रद्धापूर्वक जप करने से मेरा भक्त अश्वमेध यज्ञ से भी अधिक फल प्राप्त करता है—इसमें कोई संदेह नहीं है।

रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम्।
स्तुवन्ति नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नराः॥ २५॥

जो लोग दूर्वादल के समान श्याम वर्ण, कमलनयन, पीतांबरधारी भगवान् राम का इन दिव्य नामों से स्तवन करते हैं, वे संसार-चक्र में नहीं पड़ते।

रामं लक्ष्मणपूर्वजं रघुवरं सीतापतिं सुन्दरं
काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं धार्मिकम्।
राजेन्द्रं सत्यसंधं दशरथतनयं श्यामलं शान्तमूर्तिं
वन्दे लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम्॥ २६॥

लक्ष्मणजी के पूर्वज, रघुकुल में श्रेष्ठ, सीताजी के स्वामी, अति सुंदर, ककुत्स्थ कुलनंदन, करुणासागर, गुणानिधान, ब्राह्मणभक्त, परम धार्मिक, राजराजेश्वर, सत्यनिष्ठ, दशरथ पुत्र श्याम और शांत मूर्ति, संपूर्ण लोकों में सुंदर, रघुकुल तिलक, राघव और रावणारि भगवान् राम की मैं वंदना करता हूँ।

रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे।
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः॥ २७॥

राम, रामभद्र, रामचंद्र, विधातृ स्वरूप, रघुनाथ, प्रभु सीतापति को नमस्कार है।

श्रीराम राम रघुनन्दन राम राम
श्रीराम राम भरताग्रज राम राम।
श्रीराम राम रणकर्कश राम राम
श्रीराम राम शरणं भव राम राम॥ २८॥

हे रघुनंदन श्रीराम! हे भरताग्रज भगवान् राम! हे रणधीर प्रभु राम! आप मेरे आश्रय होइए।

श्रीरामचन्द्रचरणौ मनसा स्मरामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ वचसा गृणामि।

श्रीरामचन्द्रचरणौ शिरसा नमामि
श्रीरामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये॥ २९॥

मैं श्रीरामचंद्र के चरणों का मन से स्मरण करता हूँ, श्रीरामचंद्र के चरणों का वाणी से कीर्तन करता हूँ, श्रीरामचंद्र के चरणों को सिर झुकाकर प्रणाम करता हूँ तथा श्रीरामचंद्र के चरणों की शरण लेता हूँ।

माता रामो मत्पिता रामचन्द्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचन्द्र।
सर्वस्वं मे रामचन्द्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने॥ ३०॥

राम मेरी माता है, राम मेरे पिता हैं, राम स्वामी हैं और राम ही मेरे सखा हैं। दयामय रामचंद्र ही मेरे सर्वस्व हैं, उनके सिवा और किसी को मैं नहीं जानता, बिल्कुल नहीं जानता।

दक्षिणे लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा।
पुरतो मारुतिर्यस्य तं वन्दे रघुनन्दनम्॥ ३१॥

जिनकी दाईं ओर लक्ष्मणजी, बाईं ओर जानकीजी और सामने हनुमान्जी विराजमान हैं, उन रघुनाथजी की मैं वंदना करता हूँ।

लोकाभिरामं रणरङ्गधरं राजीवनेत्रं रघुवंशनाथम्।
कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचन्द्रं शरणं प्रपद्ये॥ ३२॥

जो संपूर्ण लोकों में सुंदर, रणक्रीड़ा में धीर, कमलनयन, रघुवंश नायक, करुणा मूर्ति और करुणा के भंडार हैं, उन श्री रामचंद्रजी की मैं शरण लेता हूँ।

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥ ३३॥

जिनकी मन के समान गति और वायु के समान वेग है, जो परम जितेंद्रिय और बुद्धिमानों में श्रेष्ठ हैं, उन पवन नंदन वानराग्रगण्य श्रीराम दूत की मैं शरण लेता हूँ।

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।
आरुह्य कविताशाखां वन्दे वाल्मीकिकोकिलम्॥ ३४॥

कवितामयी डाली पर बैठकर मधुर अक्षरों वाले राम-राम इस मधु नाम को कूजते हुए बाल्मीकि रूप कोकिल की मैं वंदना करता हूँ।

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम्॥ ३५॥

आपत्तियों को हरने वाले तथा सब प्रकार की संपत्ति प्रदान करने वाले लोकाभिराम भगवान् राम को मैं बारंबार नमस्कार करता हूँ।

भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसम्पदाम्।
तर्जनं यमदूतानां रामरामेति गर्जनम्॥ ३६॥

'राम-राम' ऐसा घोष करना संपूर्ण संसार बीजों को भून डालने वाला, समस्त सुख-संपत्ति की प्राप्ति कराने वाला तथा यमदूतों को भयभीत करने वाला है।

रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं भजे
रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः।
रामान्नास्ति परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं
रामे चित्तलयः सदा भवतु मे भे राम मामुद्धर॥ ३७॥

राजाओं में श्रेष्ठ श्रीरामजी सदा विजय को प्राप्त होते हैं। मैं लक्ष्मीपति भगवान् राम का भजन करता हूँ। जिन रामचंद्रजी ने संपूर्ण राक्षस सेना का ध्वंस कर दिया था, मैं उनको प्रणाम करता हूँ। राम से बड़ा और कोई आश्रय नहीं है। मैं उन रामचंद्रजी का दास हूँ। मेरा चित्त सदा राम में ही लीन रहे; हे राम! आप मेरा उद्धार कीजिए।

राम रामेति रामेति रमे राम मनोरमे।
सहस्त्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥ ३८॥

(श्री महादेवजी पार्वतीजी से कहते हैं—) हे सुमुखि! रामनाम विष्णु सहस्त्रनाम के तुल्य है। मैं सर्वदा 'राम, राम, राम' इस प्रकार मनोरम रामनाम में ही रमण करता हूँ।

□

आरती श्रीगणेशजी

जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा।

माता जाकी पार्वती पिता महादेवा।
लड्डुवन का भोग लगे संत करें सेवा।।

एकदन्त दयावंत चार भुजा धारी।
मस्तक पे सिंदूर सोहे मूसे की सवारी।।

अंधन को आँख देत कोढ़िन को काया।
बाँझन को पुत्र देत निर्धन को माया।।

हार चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा।
सूरस्याम शरण आयो सफल कीजै सेवा।।

दीनन की लाज राखो शंभु-सुत वारी।
कामना को पूरा करो जाऊँ बलिहारी।।

□

आरती श्रीदुर्गाजी

जय अंबे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निशदिन ध्यावत हरि ब्रह्मा शिव जी।।
माँग सिंदूर विराजत टीको मृगमद कौ।
उज्ज्वल से दोऊ नैना चंद्रवदन नीकौ।।
कनक समान कलेवर रक्तांबर राजै।
रक्त पुष्प गल माला कंठन पर साजै।।
केहरि वाहन राजत खडग खप्पर धारी।
सुर-नर-मुनिजन सेवत तिनके दुःखहारी।।
कानन कुंडल शोभित नासाग्रे मोती।
कोटिक चंद्र दिवाकर राजत सम ज्योति।।
शंभु निशंभु बिढारे महिषासुर घाती।
धूम्र विलोचन नैना निशदिन मदमाती।।
चंड-मुंड संहारे, शोणित बीज हरे।
मधु-कैटभ दोऊ मारे, सुर भयहीन करे।।
ब्रह्माणी, रुद्राणी, तुम कमला रानी।
आगम निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।।
चौंसठ योगिनी गावत नृत्य करत भैरू।
बाजत ताल मृदंगा अरु बाजत डमरू।।
तुम ही जग की माता, तुम ही हो कर्ता।
भक्तन की दुःख हरता, सुख संपत्ति कर्ता।।

भुजा अष्ट अति शोभित वरमुद्रा धारी।
मनवांछित फल पावत सेवत नर नारी।।
कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती।
मालकेतु में राजत कोटि रतन ज्योती।।
माँ अंबे की आरती जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी सुख-संपत्ति पावे।।

□

आरती श्रीशंकरजी

जय शिव ओंकारा, प्रभु जय शिव ओंकारा।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धांगी धारा।।
ओ३म् हर हर हर महोदव!
एकानन चतुरानन पंचानन राजे।
हंसासन गरुडासन वृषवाहन साजे।। ओ३म् हर हर···
दो भुज चारु चतुर्भुज दसमुख अति सोहे।
तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहे।। ओ३म् हर हर···
अक्षमाला बनमाला मुंड़माला धारी।
चंदन मृग मद सोहे भोले शुभकारी।। ओ३म् हर हर···
श्वेतांबर पीतांबर बाघंबर अंगे।
ब्रह्मादिक सनकादिक प्रेतादिक संगे।। ओ३म् हर हर···
कर मध्ये कमंडलु त्रिशूल धारी।
सुखकारी दुःखहारी जग पालन कारी।। ओ३म् हर हर···
ब्रह्मा, विष्णु, सदाशिव जानत अविवेका।
प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका।। ओ३म् हर हर···
त्रिगुण स्वामि की आरति जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी मनवांछित फल पावे।। ओ३म् हर हर···
बोलो भगवान् ब्रह्मा विष्णु महेश की जय!
ओ३म् नमः शिवाय!

□

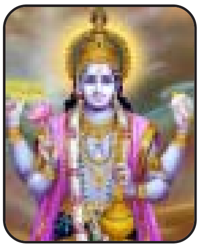

आरती श्रीजगदीशजी

ओ३म् जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।
भक्त जनन के संकट क्षण में दूर करे।।
जो ध्यावे फल पावे दुख विनसे मन का।
सुख संपत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का।।
मात-पिता तुम मेरे शरण गहूँ किसकी।
तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी।।
तुम पूरण परमात्मा तुम अंतर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी।।
तुम करुणा के सागर तुम पालन कर्ता।
मैं मूरख खल कामी कृपा करो भर्ता।।
तुम हो एक अगोचर सबके प्राणपति।
किस विधि मिलूँ दयामय तुमको मैं कुमति।।
दीनबंधु दुःखहर्ता तुम रक्षक मेरे।
करुणा हस्त उठाओ द्वार पड़ा तेरे।।
विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ संतन की सेवा।।
तन मन धन सबकुछ है तेरा।
तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा।।
श्री जगदीशजी की आरती जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी सुख संपत्ति पावे।।

आरती श्रीरामचंद्रजी

आरती कीजै श्री रघुबरजी की।
सत् चित् आनंद शिव सुंदर की।।
दशरथ-तनय, कौसिला-नंदन।
सुर-मुनि-रक्षक दैत्य-निकंदन।।
अनुगत-भक्त भक्त-उर-चंदन।
मर्यादा-पुरुषोत्तम वर की।।
निर्गुण-सगुन अरूप-रूपनिधि।
सकल लोक-वंदित विभिन्न विधि।।
हरण शोक-भय, दायक सब सिधि।
मायारहित दिव्य नर-वर की।।
जानकी पति सुराधिपति जगपति।
अखिल लोक पालक त्रिलोक गति।।
विश्ववंद्य अनवंद्य अमित-मति।
एकमात्र गति सचराचर की।।
शरणागत - वत्सल - व्रतधारी।
भक्त-कल्पतरु-वर असुरारी।।
नाम लेत जग पावनकारी।
बानर-सखा, दीन-दुख हर की।।

□

आरती श्रीकुंजबिहारीजी

आरती कुंजबिहारी की, श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की,
गले में वैजंती माला, बजावें मुरली मधुर बाला।
श्रवण में कुंडल झल काला, नंद के आनंद नंदलाला,
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली।
भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक।
चंद्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
कनकमय मोर मुकुट विलसैं, देवता दर्शन को तरसैं,
गगन से सुमन रासि बरसैं, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल रति गोप कुमारी की।।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
जहाँ से प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणी श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच।
हरै अघ कीच, चरण छवि श्रीबनवारी की।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।।
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बजा रहे वृंदावन वेणू,
चहूँ दिशि गोपी ग्वाल धेनू, हँसत मृदु मंद, चाँदनी चंद।
कटत भव फंद, टेर सुनु दीन दुखारी की।।
श्री गिरिधर कृष्ण मुरारी की।। ☐

आरती श्रीलक्ष्मीजी

ओ३म् जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णु विधाता।।
उमा, रमा, ब्रह्माणी, तुम ही जग-माता।
सूर्य-चंद्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता।।
दुर्गा रूप निरंजनि, सुख-संपत्ति दाता।
जो कोई तुमको ध्यावत, ऋद्धि-सिद्धि पाता।।
तुम पाताल-निवासिनि, तुम ही शुभदाता।
कर्म-प्रभाव-प्रकाशिनि, भवनिधि की त्राता।।
जिस घर में तुम रहतीं, सब सद्गुण आता।
सब संभव हो जाता, मन नहिं घबराता।।
तुम बिन यज्ञ न होते, वस्त्र न कोई पाता।
खान-पान का वैभव, सब तुमसे आता।।
शुभ-गुण मंदिर सुंदर, क्षीरोदधि जाता।
रत्न चतुर्दश तुम बिन, कोई नहीं पाता।।
माँ लक्ष्मीजी की आरती, जो कोई जन गाता।
उर आनंद समाता, पाप उतर जाता।।

□

आरती श्रीकृष्णजी की

जय श्रीकृष्ण देवा, प्रभु जय श्रीकृष्ण देवा।
अपनी भक्ति दीजो चरणन की सेवा।।
मोर मुकुट पीतांबर गलमाला धारी।
कानों में कुंडल झलके बंसी की छवि न्यारी। जय…

आप हो पिता हमारे, हम बालक सारे।
अपनी दया दिखाओ, आन खड़े द्वारे। जय…

आप हो कृपा के सागर, पाप हरण स्वामी।
हम हैं कामी क्रोधी, कपटी अज्ञानी। जय…

आप हो दीनों के बंधु, भक्तों के प्यारे।
जितने शरण में आए, आपने सब तारे। जय…

जय पूरण परमेश्वर, जय प्रभु कंसारी।
प्रेमी दास तिहारो, जय गिरिवर धारी।। जय…